International Journal of Applied Research 2016; 2(11): 52-54

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(11): 52-54
www.allresearchjournal.com
Received: 05-10-2016
Accepted: 06-11-2016

सुनीता देवी
षक्ति नगर गली न0 1, बरनाला रोड़ सिरसा, भारत।

Correspondence
सुनीता देवी
षक्ति नगर गली न0 1, बरनाला रोड़ सिरसा, भारत।

संत रैदास की काव्य–भाषा

सुनीता देवी

प्रस्तावना

समाज को आधर बनाकर मुक्त कंठ से काव्य पाठ करने वाले ज्ञानमार्गी कवि संत रैदास ने परमात्मा की स्मृति में जो काव्य लिखा उसमें भक्ति का वर्णन सहज ही हुआ है। इनके काव्य की विषय वस्तु जितनी सहज, स्वाभाविक, नैसर्गिक और प्रभावी है। उनकी अभिव्यक्ति का पक्ष भी उतना ही नैसर्गिक एवं प्रबल है। संत रैदास के काव्य के शिल्प पक्ष का मूल्यांकन करके हम रैदास की भाषा, अलंकार और छंद योजना का अवलोकन कर सकते हैं। अतः यहाँ संत रैदास के काव्य के उस पक्ष जिसमें भक्ति का वर्णन मिलता है वहां उनकी भाषा के स्वरूप को देखा जा रहा है।

संत रैदास भक्त कवि है। संत रैदास की काव्य भाषा ब्रज ही है। संत रैदास के काव्य का शब्द भंडार अत्यंत समृ(है क्योंकि ब्रजभाषी साहित्य की एक लम्बी परंपरा रही है। शास्त्राादि का पठन–पाठन होने का माध्यम संस्कृत होने से उसका विपुल शब्द समूह इसे विरासत में प्राप्त हुआ है। जिसे ब्रजवासियों ने अपनी भाषा की प्रकृति के अनुकूल तत्सम् और तद्भव दोनों ही रूपों में प्रयुक्त किया है। साथ ही मुगल व्यवस्था के कारण अरबी पफारसी शब्दों को भी इस भाषा ने ग्रहण किया। जहां तक शब्द भंडार की दृष्टि से संत रैदास के काव्य का प्रश्न है तो इन्होंने ब्रजभाषा के ठेठ शब्दों को ही लिया है। इनके काव्य में भक्ति वर्णन के समय आए विभिन्न प्रकार के शब्दों का यहाँ वर्णन अपेक्षित है। जैसे–

> जों अविनासी सबका कर्ता, व्यापि रह्यो सब ठौर रे ।
> पंच तत्त जिन किया पसारा, सो यों ही किछु और रे ।
> तूं तो कहत हौ यों ही कर्त्ता, याकूं मानिख करै रे ।
> तारणि तरणि सकति जे यामैं, तो आपण क्यूँ न तिरै रे ।
> अही भरोसे सब जग बूढ़ा, सुणि पण्डित की बात रे ।। [1]

अभिव्यंजना का सबसे मुख्य सहज माध्यम है– भाषा। दूसरे शब्दों में सृजनात्मक तथा कलात्मक संवेदनाओं का यह विशिष्ट प्रकटीकरण है, जिसकी परिधि में भाव प्रकाशन की समस्त सीमाएं आ जाती हैं। साहित्यिक भाषा सामान्य प्रकटीकरण के क्षेत्रा से परे विशिष्ट शैली का रूप धरण करती है। यह भाषा वक्ता की अनुभूति को सपफल के अंतःस्तल में ज्यों का त्यों उद्बुद्ध कर देती है।

संत रैदास की भाषा मन–प्रचलित ब्रजभाषा है, जो उन्हें परिवेश से मिली थी। कवि ने शब्दों को तोड़ने मरोड़ने में तो कोई कसर नहीं छोड़ी, तथापि रमानुकूल शब्दों को ढाल लिया है। ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुकूल संत रैदास कवि ने संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, कारक एवं क्रियाओं का कालक्रमानुसार प्रयोग किया है। संत रैदास काव्य का मुख्य विषय भक्ति है। सर्वत्रा शब्द का प्रचलित रूप ही दिखाई पड़ता है। तद्भव शब्द– इनके काव्य में तद्भव शब्दों का प्रयोग भी प्रचुर मात्राा में मिलता है। कहीं–कहीं तो भाषा में आडंबरहीन सौंदर्य स्वाभाविक रूप से द्विगुणिता हो जाता है। शब्दों के कर्णप्रिय सरल रूप ब्रजभाषा की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल हो गए हैं सांवरो, कारी, धौरी, निठुराई, जतन, पूनौ, राति, मारग, सनेह, निरधर, बतियां, सौति, कागद, छतियां, अंगुरी, तरुनाई, लुनाई अदि। संत रैदास के काव्य में प्रयुक्त तत्सम् शब्द उनके काव्य में इस प्रकार आए हैं कि वे ब्रजभषा के निजी व्यक्ति में बाध्क न बन सके जैसे – मीन, खंजन, कुरंग, कंज, मलय, पंकज, विभाकर, इन्द्रीकर आदि। ब्रजभाषा में अच्छी तरह रच बस चुके तत्सम् शब्दों को ही इन्होंने प्रयुक्त किया है। उदाहरणार्थ–

> 'भक्ति न इन्द्री बांधा, भक्ति ज जोग साधा, भक्ति न आहार घटाई। भक्ति न निद्रा साधै, भक्ति न बैराग बांधे, भक्ति न सब बेद बड़ाई।

भक्ति न मूड़ मुड़ाई, भक्ति न माल दिखाई, भक्ति न चरन धुवाये।
आपो गयो तो भक्ति पाई, ऐसी भक्ति हैं भाई ।
राम मिल्यो आपो गुन खायो रिधि–सिधि सबै गंवाई ।
कहै रैदास की छूटी आस तब हरि ताहि के पास ।
आत्मा थिर भई जबै, तब सबही निधि पाई ।। [2]

रैदास भाषा की प्रकृति और अपनी सुविध के अनुसार अनेक कठिन संस्कृत शब्दों को तद्भव रूप देकर प्रयुक्त करते रहते हैं। अतः ऐसे शब्दों का बहुतायत प्रयोग मिल जाता है। उदहरणार्थ–

'संतों अनन भक्ति यह नाहीं ।
जब लग सत रज तम पांचों गुन व्यापत हैं या माहीं ।
सोई अंतर करि हरि सूं अपमारग कूं आनै ।
काम क्रोध मद लोभ मोह की पल पल पूजा ठानै ।
सत्य सनेह इश्ठ अंग लागै, अस्थल अस्थल खेलै ।
जो कछु मिले आन आखत त्यूं सतु दारा नहीं मेलै । [3]

मुगलकाल के प्रभाववश तथा मुगल सम्राट के कर्मचारी होने के कारण संत रैदास की भाषा में अरबी–पफारसी भाषा के शब्दों का भी सहज प्रयोग मिलता है। उदाहरणार्थ हुस्न, भार, चस्का, तकदीर, नज़ारा, ुकम, इशक, बेदरद, दिलदार, दिलराजी, चमन, फिजा, मजनू, तीर आदि।

'आयो आयो हो देव तुव सरना, जानि कृपा कीजै अपना जना।
मैं दाना मैं भाई साहिब मेरा, खिदमतगार बंदा मैं तेरा । [4]

देशी शब्दों का रूप वास्तव में अनुकरणात्मक में आ जाता है, तब भी कूक, सिरात, झरोखा, करारि, दाबत, धैरिय, कारिया, भोरए सांझ, गुपाल आदि देशी शब्द रूपों के प्रयोग ही हैं। जैसे–

'दूरि बसै शट्कर्म सकल अरू दुख कीन्हें सेऊ ।
ज्ञान ध्यान धूरि दोऊ कीन्हें, दूरि छॉड़ै तेऊ ।।
पॉचौ थकित भये जहॉ तहॉ, जहॉ तहॉ थिति पाई ।
जा कास मैं दौर्यो फिरतो, सो अब घट में आई ।।' [5]

रैदास ने अन्य बोलियों, उपभाषाओं की अपेक्षा अरबी–पफारसी के अनेक शब्दों का उल्लेख किया है–गरीब, गुमान, गरूर, ख्याली, साहिब, ख्वासन, दाम, निसान, खलक, करेजन, गद्गद्, किवार, दिल, बाग, बदन आदि।
ऐसे शब्द जो कवि की विशिष्ट अनुभूतियों को अभिव्यक्त करते हैं भावात्मक शब्द कहलाते हैं। विशेष अवस्था में प्रयुक्त इन शब्दों का एक विशिष्ट महत्त्व होता है। संत रैदास का तो समस्त काव्य ही भावप्रधन है। अतः अनेक स्थलों पर कवि की अपने भावों को विशिष्ट शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है–

'पीव संग प्रेम कबहुं नहिं पायो, करनी कवन बिसारी ।
चक को ध्यान, दधि सुत सो ज्यों हैं, त्यों तुम तें मैं न्यारी ।
भोर भयो मोह एकटक जोवत, तलफत रजनी खाई ।
मेटि दुहाग सुहागिन कीजै अपने अंग लगाई ।
कहैं रैदास स्वामि तें बिछुरे एक पलक जुग जाई । [6]

अनुकरणात्मक शब्दों का प्रयोग देव ने नादात्मकता के लिए किया है–
इसी प्रकार छिदि–छिदि, झहर–पफहर–हरर, झरक्यौ–भरक्यौ, बिकानी–रिसानी, छका–छकी, रुका–रुकी, खरकी–पफरकि– आदि शब्दों का प्रयोग भी संत रैदास ने किया है। जैसे–

'हम मांनौ गुनि जोग सुनि जुगतो, महा पुरूख रे भाई ।
हम मानौ सूर, सकल विश–त्यागी, ममता नहीं मिटाई ।।
मानौ अखिल षून्य मन षोध्यो, सब चेतन सुधि पाई । [7]

जीवन की लयबद्ध–क्रमबद्ध गति में मानव के सुरीले स्वर का नाम ही मुहावरे हैं। ये मानव जीवन के अश्रु, हास, राग, विराग, हर्ष और पीड़ा आदि के मूलभूत तत्व द्योतक हैं। लोकोक्तियां जनमानस का वेग और गरिमा हैं जो जनमानस को गीत एवं स्पंदन प्रदान करती है। अतः ये प्रौढ़ भाषा के सहज गुण हैं।

'दीनानाथ सुनहु विनती, कौने हेतु विलम्बन ।
रैदास–दास, संत चरणहिं मोहे दीजै अवलम्बन ।

संत रैदास के काव्य में चित चुराना, होंठ कांपना, सीस धुनना, जी में गढ़ना, दृग मूंदना, भौंह तरेरना, आंखे पफेरना, चित्रा में चढ़ना अनेक मुहावरे हैं तो राई में सुमेर दिखाई देना, ओस की ओस से प्यास न बुझना, गड़े मुर्दे उखाड़ना, तिल का ताड़ बनाना आदि लोकोक्तियां भी कहीं–कहीं प्रयुक्त है। भाषा के सौन्दर्य में वृ(करने वाले तत्व के रूप में गुणों को शब्दालंकारों से अध्कि महत्त्वपूर्ण माना है। आचार्य वामन ने दस शब्द और दस अर्थ गुण माने हैं। [8] किंतु परवर्ती आचार्यों ने मूलतः तीन काव्य गुणों– माधुर्य, ओज और प्रसाद को ही स्वीकार किया है क्योंकि शेष उनके विचारानुसार या तो इन्हीं तीनों में समाहित हो जाते हैं या कुछ दोषों के अभाव के अतिरिक्त कुछ और न होने के कारण गणनीय नहीं है। [9] इस दृष्टि से संत रैदास के काव्य पर विचार करने पर यह तथ्य समक्ष आता है कि कवि के कार्य विषयों के अनुरूप ओज गुण तो उनके काव्य में उपलब्ध ही नहीं है,क्योंकि संत रैदास का प्रेम उसकी पीड़ा, अन्तःव्यथा और अंत में भक्ति के गायक कवि हैं। अतः उनके काव्य में माधुर्य और प्रसाद गुण ही प्रधन है। परिमाण की दृष्टि से माधुर्य का ही आध्क्यि है। उदाहरणार्थ–

'वेद तें पुराण, पुराण ते भागवत, भागवत तें भक्ति प्रकट कीन्ही ।
भक्ति तें प्रेम, प्रेम तें लक्षणा, बिनु सत्संग नहीं जात चीन्हीं ।
...करौं डंडौत चरन पखारौं, तन मन धन उन ऊपर वारौं ।
कथा कहैं अरू अर्थ विचारैं....।
किहि विधि अब सुमिरों रे, अति दुर्लभ दीनदयाल ।
...कौन भक्ति ते रहै प्यारो पाऊॅ ।। [10]

संत रैदास के आलंम्बन तराशी हुई उदात भावनाएं हैं, जिन्हें चित्रिात करने के लिए सरस और मधुर शब्दावली ही उपयुक्त है। संत रैदास ने कहीं–कहीं इसी माधुर्य गुण प्रेम के कारण व्याकरणिक नियमों का उल्लंघन किया है–

भाई बन्धु कुटुम्ब सहेला, ओइ भी लागै काढु सबेरा ।।
घर की नारि उरहि तन लागी, वह तो भूत भूत करि भागी ।।
कह रैदास जबै जग लूट्यो, हम तौ एक राम कहिं छूट्यो ।। [11]

संत रैदास काव्य में मधुर वर्ण अपने आप मानस चक्षुओं के सम्मुख उपस्थित हो जाते हैं, वहां परुष वर्णों को ढूंढने में प्रयत्न करना पड़ता है–

'चन्द सूर नहिं, राति– दिवस नहिं, धरनि आकास न भाई।
करम–अकरम नहिं, षुभ–अषुभ नहिं, का कहि देंहु बड़ाई ।। [12]

अभिध लक्षणा और व्यंजना में संत रैदास ने अभिध को ही प्रमुखता दी है। लक्षणेां और उदाहरणों दोनों में यह शब्द शक्ति

देखी जा सकती है। अनुकूल शब्द शक्ति का लक्षण द्रष्टव्य है। मिलन और परिचय संबंधी उपभोक्तात्मक प्रवृत्ति में भी अभिध का आधर बनी है। अभिधा काव्य विषय को ग्रहणमात्रा करवाती है, परंतु लक्षणा सहृदय को उसके गुणों के निकट ले जाती हैं। दूसरे शब्दों में लक्षणा वस्तु को मूर्त रूप प्रदान करती है। प्रगाढ़ वासनात्मक और उपभोगात्मक चित्राों में कहीं–कहीं लक्षणा के दर्शन होते हैं।

'स्वांग देखि सबहिं जग लखयो, जापनऔर बधाई ।।
स्वांगपहर हम सांच न जान्यो, लोगन यह भरमाई ।
स्वच्छ रूप सेली जब पहिरी, बोली तब सुधि आई ।।
ऐसी भगति हमारी संतों, प्रभुता इहइ बढ़ाई । [13]

गुरू शील की शिक्षा देते हैं संसार के अनेक सुखों का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं– ऐसी वाणी बोलना जो मनभावन को अच्छी लगे, ऐसा सुनते ही मन रोमांचित हो उठता है और वाक्य मिलन के लिए उद्विग्न कर देता है। मनभावन का नाम सुनते ही प्रकारान्तर से मिलन सुख का चित्र उसके शरीर और मन पर अंकित हो जाता है।

'प्रभुजी तुम चन्दन हम पानी, जाकी अंग अंग बास समानी।।
प्रभुजी तुम धन बन हम मोरा, जैसे चितवत चन्द चकोरा ।।
प्रभुजी तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती ।।
प्रभुजी तुम मोती हम धागा, जैसे सोने मिलत सुहागा ।।
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भक्ति करै रैदासा ।। [14]

उपरोक्त पंक्तियों में न माधुर्य की स्निग्धता है और न परुष वर्णों का खुदरापन, बल्कि प्रत्येक वर्णन सहज और स्वाभविक रूप में प्रस्तुत हुआ है।

निष्कर्ष

काव्य के शिल्प पक्ष की दृष्टि से अलंकार शब्द शक्ति, गुण, भाषा, छंद, बिंब योजना की दृष्टि से संत रैदास का काव्य व्यापक है। संत रैदास के काव्य शिल्प में कोमल सामंजस्य है। इनकी भाषा में झंकार, संगीत और उज्जवलता का समन्वय है। भाषा संबंधी अनेक व्याकरणिक दोषों के होते हुए भी काव्य का शिल्प सौष्ठव, कोमलता–स्निग्धता और तरलता का एक आकर्षक समन्वित रूप है, उनकी शैली में कांति का गुण विद्यमान है, जिसके बल पर कवि देव अपने युग के प्रतिनिधि कवियों में परिणित होते हैं। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि संत रैदास के काव्य में उनका भक्ति वर्णन जितना सौष्ठवमयी है उनकी भाषा उतनी सबल, प्रभावी एवं सुन्दर है।

यह कहा जा सकता है कि यद्यपि संत रैदास का मूल उद्देश्य अलंकार निरूपण नहीं था, वे तो केवल अपनी अनुभूतियों को स्वच्छ और स्पष्ट रूप में सहृदय तक पहुंचाना चाहते थे इसी प्रयास में उनकी कल्पना और अभिव्यंजना की कुशलता के कारण प्रायः सभी प्रकार के अलंकारों का सहज प्रोग उनके काव्य में दृष्टिगत होता है।

संधर्व सूची

1. ''संत रैदास'' पद 70 पृ0 65
2. ''संत रैदास'' पद 12 पृ0 68
3. ''संत रैदास'' पृ0 66
4. ''संत रैदास'' पृ0 78
5. ''संत रैदास'' पृ0 118
6. ''संत रैदास'' पृ0 79
7. ''संत रैदास'' पृ0 120
8. काव्यालंकारसूत्रावृत्ति, आचार्य वामन, 1/3/1/4
9. काव्यप्रकाश – आचार्य मम्मट–अष्टम परिच्छेद
10. ''संत रैदास'' पृ0 89
11. ''संत रैदास'' पृ0 123
12. ''संत रैदास'' पृ0 120
13. ''संत रैदास'' पृ0 119
14. ''संत रैदास'' पृ0 122